न चलने वाली संसद

कुछ विपक्षी दल जिस तरह संसद में हंगामा करने के लिए आमादा हैं उसे देखते हुए इसके आसार कम ही हैं कि इस सत्र के शेष दिनों में लोकसभा अथवा राज्यसभा में कोई कामकाज हो सकेगा। यह सामान्य बात नहीं कि संसद लगातार 20वें दिन भी नहीं चली। विपक्षी दल संसद में कोई कामकाज न होने देने के लिए किस तरह अड़े हैं, इसका पता इससे चलता है कि गत दिवस राज्यसभा की कार्यवाही को 11 बार स्थगित करना पड़ा। निःसंदेह यह पहली बार नहीं जब संसद में गतिरोध कायम है, लेकिन यह बात नई अवश्य है कि विपक्षी दल जिन मसलों को लेकर हंगामा कर रहे हैं उन पर बहस से भी बच रहे हैं। ऐसे में इस नतीजे पर पहुंचने के अलावा और कोई उपाय नहीं कि उनका एक मात्र उद्देश्य संसद का काम न करने देना है। भारत सरीखे बहुदलीय लोकतंत्र में संसद में थोड़ा-बहुत हंगामा और गतिरोध होना स्वाभाविक है, लेकिन अगर संसद चलेगी ही नहीं तो फिर वह अपनी महत्ता खोने का काम करेगी। यदि संसद देश के समक्ष उपस्थित ज्वलंत समस्याओं पर चर्चा और जरूरी विधेयकों पर बहस नहीं कर सकती तो फिर उसे लोकतंत्र का मंदिर अथवा जन आकांक्षाओं का मंच बताने का क्या मतलब? आखिर ऐसी संसद अपनी गरिमा की रक्षा कैसे कर सकती है जिसमें कोई काम ही न हो सके? संसद की कार्यवाही में गतिरोध कोई आज की समस्या नहीं है, लेकिन यह देखना दयनीय है कि सांसद किसी मसले पर विरोध जताने के लिए संसद की छत पर चढ़ जाएं अथवा शपथ ग्रहण के तत्काल बाद पीठासीन अधिकारी के समक्ष हंगामा करने पहुंच जाएं। हम सब इससे अवगत ही हैं कि संसद में किस तरह सुनियोजित तरीके से नारेबाजी करने और तख्तियां-बैनर लहराने का काम होने लगा है।

इसमें दोराय नहीं कि संसद चलाने की जिम्मेदारी सत्तापक्ष की है और इस जिम्मेदारी के निर्वाह के लिए विपक्ष की मांगों के प्रति लचीला रवैया आवश्यक है, लेकिन तब कुछ नहीं हो सकता जब विपक्ष असहयोग पर अड़ जाए। इसका कोई मतलब नहीं कि पक्ष-विपक्ष के कुछ नेता संसद न चलने के कारण अफसोस प्रकट कर रहे हैं, क्योंकि अब आवश्यकता इसकी है कि सदन चलाने के कुछ नए तौर-तरीके तय किए जाएं और जरूरत पड़ने पर उन्हें कानूनी रूप भी दिया जाए। ऐसा इसलिए, क्योंकि विधायी सदनों की कार्यवाही के संदर्भ में जो आचार संहिता अथवा परंपरा है उसकी धज्जियां उड़ चुकी है। यह वक्त की मांग है कि ऐसे नियम बनें जिसके तहत विधेयकों पर बहस के लिए अलग से समय तय किया जाए और इस दौरान हंगामा निषेध हो। इसी तरह किसी मसले पर दो-तीन से ज्यादा बार सदन स्थगित न करने का नियम बने। यदि गतिरोध इस पर हो कि बहस किस नियम के तहत हो तो आम सहमति बनाने की अवधि तय की जाए और फिर भी सहमति न बने तो किसी अन्य खास नियम के तहत बहस अनिवार्य की जाए। इस मामले में दुनिया के श्रेष्ठ लोकतांत्रिक देशों से सबक सीखा जा सकता है। वैसे भी यह किसी से छिपा नहीं कि हम सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश भले ही हों, लेकिन बेहतर नहीं हैं।

कुपोषण के खिलाफ जंग

प्रदेश में अब कुपोषण पर निर्णायक प्रहार की तैयारी शुरू हो गई है। हालांकि इसे लेकर योजनाएं पहले भी चलती रही हैं, बावजूद इसके समस्या जस की तस बनी हुई है। गर्भवती महिलाओं से लेकर पांच वर्ष तक के बच्चों में कुपोषण की समस्या दूर करने के लिए कई कदम उठाए गए हैं, लेकिन ये योजनाएं बच्चों का कुपोषण दूर करने के बजाय जिम्मेदार तंत्र की जेबें भरने के काम ही आ रही हैं। अब सरकार ने तय किया है कि पुष्टाहार का वितरण अब बार कोड के साथ किया जाएगा। फिलहाल एक शासनादेश जारी हुआ है, जिसमें बताया गया है कि नेशनल फैमिली हेल्थ सर्वे-4 के अनुसार देश की हर चौथी और उत्तर प्रदेश की हर दूसरी गर्भवती कुपोषित है। इसे देखते हुए प्रदेश के 39 जिलों में शबरी संकल्प अभियान आरंभ किया गया है। इसमें पंचायती राज विभाग को तीन बिंदुओं पर सहभागिता प्रदान करनी है, जिसमें कुपोषित बच्चों के परिवारों में निजी शौचालय निर्माण कराने और उनके उपयोग की नियमित देखरेख करनी होगी।

> देश की हर चौथी और उप्र की हर दूसरी गर्भवती कुपोषित है। इसे देखते हुए प्रदेश के 39 जिलों में शबरी संकल्प अभियान आरंभ किया गया है

प्राथमिक विद्यालयों में शुद्ध पेयजल उपलब्ध कराने की जिम्मेदारी भी ग्रामसभाओं की होगी। प्रत्येक गांव में कुपोषण के शिकार बच्चों के परिवार की सूची जिला पंचायत अधिकारी एकत्र करेंगे और स्कूलों के साथ आंगनबाड़ी केंद्रों में शौचालय व पेयजल व्यवस्था को भी सुधारेंगे। कुल मिलाकर ग्रामीण क्षेत्रों में कुपोषण की दर में दिसंबर 2018 तक दो फीसद कमी लाने में पंचायतीराज को योगदान देना है। देखा जाए तो सरकार भले ही स्वस्थ भविष्य की इबारत लिखने के लिए लाख प्रयास कर रही हो, पर जिस तंत्र के सहारे वह लक्ष्य हासिल करना चाहती है, या जो लोग अभी तक जिम्मेदार रहे हैं, उनकी नीयत को भी सरकार को परखना पड़ेगा।

कह के रहेंगे

माधव जोशी

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या एससी-एसटी एक्ट में केंद्र द्वारा पुनर्विचार के आश्वासन के बावजूद बुलाया गया भारत बंद राजनीति से प्रेरित था?

आज का सवाल

क्या एक साथ दो सीटों पर चुनाव लड़ने पर पाबंदी लगा दी जानी चाहिए?

अपनी राय और अधिक लोगों तक पहुंचाने के लिए अपने मोबाइल के मैसेज बॉक्स में जाकर POLL लिखें, स्पेस देकर Y, N या C लिखकर 57272 पर भेजें
Y –हां, N–नहीं, C–कह नहीं सकते

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

वोट बैंक बचाने की जुगत

प्रदीप सिंह

दलितों के लिए विपक्ष की चिंता का अंदाजा इससे लगता है कि जिस मुद्दे पर एक दर्जन लोगों की जान चली गई उस पर वह संसद में चर्चा के लिए तैयार नहीं

जहां व्यक्तियों के निजी स्वार्थ बहुत महत्वपूर्ण हों और समाज का कोई स्वार्थ न हो वहां अंतर्कलह होना कोई अनहोनी बात नहीं है। यह बात आज की राजनीतिक परिस्थिति पर बिल्कुल सटीक बैठती है। राजनीतिक दलों के स्वार्थ समाज और देश के हित पर भारी पड़ रहे हैं। राजनीतिक दलों की आपसी प्रतिद्वंद्विता/प्रतिस्पर्धा स्वस्थ लोकतंत्र के लिए अच्छी भी है और जरूरी भी। संसदीय जनतंत्र में विपक्ष की भूमिका बड़ी अहम होती है। उससे अपेक्षा रहती है कि वह सरकार को निरंकुश होने से रोकेगा और जनहित, देशहित के मुद्दों पर सरकार का सहयोग करेगा। दुर्भाग्य से ऐसा हो नहीं रहा। हाल यह है कि बाड़ ही खेत खाने लगी है। देश की राजनीति एक विचित्र दिशा की ओर मुड़ गई है। इस दिशा में जनहित और राष्ट्रहित पीछे छूट गए हैं। सत्तारूढ़ दल का विरोध करते-करते विपक्षी दल जनतंत्र के ही विरोध में खड़े नजर आ रहे रहे हैं। संख्या बल में विपक्ष और भी कमजोर हो चुका है, लेकिन संख्या बल में कमी देश की राजनीति को प्रभावित करने की उसकी क्षमता के आड़े कभी नहीं आई। यह कहना गलत नहीं होगा कि आजादी के बाद से विपक्ष इतना निष्प्रभावी कभी नहीं रहा। सबसे बड़ी समस्या यह लग रही है कि विपक्ष को पता ही नहीं है कि वह चाहता क्या है? सत्ता में आने की उसकी इच्छा और प्रयास जायज हैं, लेकिन इसके लिए तो लोगों के बीच जाना होगा और समझना होगा कि वे क्या चाहते हैं? पिछले चार साल में विपक्ष एक दो नहीं 15 राज्यों में चुनाव हार चुका है, लेकिन विपक्षी नेताओं की एक ही रट है कि देश के लोगों का मोदी से मोहभंग हो चुका है। नोटबंदी हुई तो कहा गया कि अब मोदी युग खत्म, फिर जब जीएसटी लागू हुआ [illegible] तो कहा गया कि अब तो लोग भाजपा को उखाड़ फेंकेंगे। मतदाताओं ने किसे उखाड़ फेंका, यह बताने की जरूरत नहीं है। आज हालत यह है कि संसद ठप है, विपक्ष सरकार के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव लाने की बात कर रहा है, पर खुद ही सदन में व्यवस्था कायम नहीं होने दे रहा। समझना कठिन है कि वह अविश्वास प्रस्ताव लाना चाहता है कि रोकना?

देश के सर्वोच्च न्यायालय को सत्तापक्ष और विपक्ष की राजनीति में घसीटा जा रहा है। अपने राजनीतिक लाभ के लिए सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश के खिलाफ महाभियोग प्रस्ताव लाने की तैयारी हो रही है। इस सबमें सबसे आगे खड़ी है देश की सबसे पुरानी और सबसे ज्यादा समय तक राज करने वाली कांग्रेस पार्टी। विपक्ष संसद क्यों नहीं चलने दे रहा, इसका उसके पास कोई भी वाजिब तर्क नहीं है। अक्सर देखा गया है कि बड़े मुद्दों पर बहस से सरकार भागती है, लेकिन यहां तो विपक्ष तुला हुआ है कि बहस न होने पाए। राजनीति की दशा या कहें दुर्दशा का सबसे ताजा उदाहरण अनुसूचित जाति जनजाति (अत्याचार निरोधक) कानून पर सुप्रीम कोर्ट के फैसले पर आयोजित बंद और हिंसा है। समाज के किसी भी वर्ग की कोई भी तकलीफ या शिकायत उसकी हिंसा के औचित्य को सही साबित नहीं कर सकती, पर दो अप्रैल की हिंसा की राजनीतिक दलों द्वारा आलोचना न किया जाना बताता है कि देश की राजनीति किस खाई में पहुंच गई है। आरक्षण, दलित, वनवासियों के हित और सुरक्षा का मुद्दा राजनीतिक दलों के लिए राजनीतिक फुटबाल बन गया है। इस संबंध में सरकारों द्वारा उठाए गए ज्यादातर कदम इस वर्ग से ज्यादा अपने राजनीतिक हित को ध्यान में रखकर किए गए हैं। विश्वनाथ प्रताप सिंह की सरकार ने जनवरी 1990 में इस कानून में संशोधन किया। इसी के जरिये व्यवस्था की गई कि शिकायत दर्ज कराते ही गिरफ्तारी हो जाएगी। विश्वनाथ प्रताप सिंह की नजर दलित वोटों पर थी। वह कांग्रेस और भाजपा के जनाधार को तोड़कर जनता दल के लिए एक नया सामाजिक समीकरण बनाना चाहते थे। इसीलिए संसद के सेंट्रल हॉल में बाबा साहब भीमराव आंबेडकर का चित्र लगा और उन्हें मरणोपरांत भारत रत्न दिया गया। जो काम कांग्रेस ने आजादी के बाद के 43 वर्षों में नहीं होने दिया।

अवधेश राजपूत

वीपी सिंह ने जो किया उसका विरोध किसी ने नहीं किया। उसकी वजह यह नहीं थी कि सब इससे सहमत थे, लेकिन इसके विरोध से होने वाले राजनीतिक नुकसान का जोखिम कोई मोल नहीं लेना चाहता था। इसके बाद इस प्रकरण में नया अध्याय जुड़ा। 2007 में मायावती पूरे बहुमत के साथ उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री बनीं। उन्होंने कहा कि इस कानून का दुरुपयोग हो रहा है। मुख्यमंत्री बनते ही उन्होंने इस कानून में संशोधन करवाया। कहा कि हत्या और दुष्कर्म के मामलों के अलावा किसी भी दलित उत्पीड़न की शिकायत पर एससी- एसटी कानून के बजाय भारतीय दंड विधान की धाराओं के तहत मुकदमा चलेगा। इतना ही नहीं दुष्कर्म के मामले में भी मेडिकल जांच से प्रथमदृष्टया मामला बनने पर ही इस कानून के तहत कार्रवाई होगी। कुछ महीने बाद उन्होंने एक और आदेश जारी किया कि शिकायत गलत पाई गई तो शिकायतकर्ता के खिलाफ ही मुकदमा चलेगा। यह कानून उत्तर प्रदेश में आज भी लागू है। सवाल है कि मायावती ने यह क्यों किया? 2007 आते आते मायावती का नारा बहुजन से सर्वसमाज हो गया था। उन्हें गैर दलितों के भी खूब वोट मिले थे। वे इसे पक्का करना चाहती थीं। इसलिए आज वे जिस दलित हित की बात कर रही हैं उसके खिलाफ जाकर गैर दलितों की शिकायत दूर करने और उन्हें खुश करने के लिए कानून में बदलाव किया।

सुप्रीम कोर्ट ने अपने 20 मार्च के आदेश में यही कहा था कि प्रथम दृष्टया मामला बनने के बाद ही गिरफ्तारी होगी और शिकायतकर्ता वकील और जज नहीं हो सकता। अदालत ने एससी-एसटी कानून के किसी प्रावधान में कोई बदलाव नहीं किया है, फिर भी बवाल क्यों हुआ? इस सवाल का भी जवाब सुप्रीम कोर्ट ने दिया। केंद्र सरकार की पुनरीक्षण याचिका पर सुनवाई करते हुए न्यायाधीशों ने कहा कि जो सड़क पर आंदोलन कर रहे थे उन्होंने शायद इस अदालत का फैसला नहीं पढ़ा है। उन्हें बरगलाया गया होगा। न्यायाधीशों की यह टिप्पणी राजनीति और खासतौर से इस मुद्दे पर विपक्ष की राजनीति का स्याह पक्ष सामने लाती है। विडंबना देखिए कि एससी एसटी कानून में बड़े बदलाव करने वाली मायावती इस आंदोलन की सबसे बड़ी पैरोकार हैं।

भारत बंद के दौरान सड़क पर हिंसा का परोक्ष समर्थन करने वालों के मन में दलितों के लिए कोई प्रेम नहीं है। उन्हें अपने वोट बैंक की चिंता है। 2014 से गैर जाटव दलितों का एक वर्ग भाजपा को वोट दे रहा है। विपक्षी दलों की चिंता का कारण यही है। इसी राजनीति के लिए दलितों का इस्तेमाल हो रहा है। दलितों के लिए इनकी चिंता कितनी गंभीर है, इसका अंदाजा इस बात से लगाइए कि जिस मुद्दे पर एक दर्जन लोगों की जान चली गई उस पर संसद में चर्चा के लिए इन राजनीतिक दलों को फुरसत नहीं मिली। सवाल है कि देश संविधान, अदालत और संसद से चलेगा या हिंसा का सहारा लेकर भारत बंद करने से?

(लेखक राजनीतिक विश्लेषक एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

डाटा चोरी और फेक न्यूज का मकड़जाल

बालेंदु शर्मा दाधीच

आज जहां तथ्य और गल्प एक ही घाट पर पानी पीते हैं वहीं आपकी जानकारी के बिना ही आपका डाटा चोरी होता रहता है

आम सोशल मीडिया यूजर भोला-भाला और भरोसा करने वाला शख्स है। उसे पता ही नहीं कि वाट्सएप, फेसबुक, यू-ट्यूब और अन्य वेबसाइटों पर वह जो कुछ देख रहा है उसका एक बड़ा हिस्सा झूठ पर आधारित है। वह जिन सनसनीखेज खबरों को लाइक और शेयर कर रहा है वे पूरी तरह झूठ हो सकती हैं। दूसरी तरफ जो अच्छे-अच्छे संदेश उसे सिलसिलेवार ढंग से मिल रहे हैं वे किसी दल या कंपनी को सेवाएं देने वाली एजेंसी की तरफ से भेजे जा रहे हैं। वह इन संदेशों को सुबूत के तौर पर पेश करता है, बिना यह जाने कि सोशल मीडिया से आए ये तथ्य और सुबूत पूरी तरह जाली हो सकते हैं। आज सोशल मीडिया के इस दौर में तथ्य और गल्प एक ही घाट पर पानी पीते हैं। इसे सोशल मीडिया का दूसरा अवतार कह सकते हैं जिसे तकनीकी भाषा में सोशल मीडिया 2.0 कहा जा सकता है। यहां बहुत कुछ बनावटी है। फिर भले ही वह फोटोशॉप के जरिये संपादित किए गए चित्र हों या फिर एकदम असली दिखने वाली शत-प्रतिशत नकली खबरें। यहां नकली मसाले मिनटों में तैयार कर लिए जाते हैं। यह अपरिमित आकार वाला ऐसा उद्योग है जिसके फोकस में केवल आप हैं, मगर आपको ही यह पता नहीं।

सोशल मीडिया 1.0 यानी उसकी पहली दस्तक जनता की शक्ति के बारे में थी। उसे करीब लाने और एकजुट करने के बारे में। संबंधों को पुनर्जीवित करने, विश्वास कायम करने और सामुदायिक संस्कृति पैदा करने के बारे में थी। इसने दुनिया भर में क्रांतियों में सूत्रधार की भूमिका निभाकर नए राजनीतिक ढांचे को जन्म दिया। नए नायक सामने आए। परंपरा ने नवीनता के लिए जगह बनाई और दूरदराज तक सूचनाओं का विस्तार हुआ। इस बीच कई अप्रिय पहलू भी सामने आए, लेकिन काफी हद तक हमने उनसे निपटना सीख लिया। अब आता है सोशल मीडिया 2.0 जिसमें ऐसा सब कुछ जायज हो गया जो आपके हितों को पूरा करता हो। हाल में हमने इसका एक नमूना देखा जब यह खुलासा हुआ कि कैंब्रिज एनालिटिका नामक ब्रिटिश फर्म ने पांच करोड़ फेसबुक यूजर्स का डाटा अनधिकृत रूप से इस्तेमाल कर अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की चुनावी जीत में बड़ी भूमिका निभाई। यूजर्स को पता ही नहीं था कि उनके मित्र किसी ऐसे एप का इस्तेमाल कर रहे हैं जो उनकी अपनी जानकारियां भी इकट्ठा करने और उन्हें किसी तीसरे पक्ष को पहुंचाने में जुटा है। कैंब्रिज एनालिटिका कोई पहली ऐसी एजेंसी नहीं है और अमेरिकी चुनाव ऐसी कोई पहली घटना नहीं जहां हमारे-आपके डाटा का दुरुपयोग किया गया हो। ऐसे तमाम वाकये होते रहे हैं। फर्क यह है कि हमारे सामने यह अब आया है। फिर डाटा का विश्लेषण करके लोगों तक कस्टमाइज्ड प्रचार सामग्री भेजना कोई अकेली चीज नहीं है जो मानस को बदलकर लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को प्रभावित करने के लिए इस्तेमाल की जा रही है।

तकनीकी लेखक और विचारक निकोलस कार ने अपनी किताब 'द शैलोज' में लिखा था कि इंटरनेट हमारे दिमाग को कुंद करने में लगा है और हम अपने दिमाग का इस्तेमाल बहुत कम करने लगे हैं, क्योंकि हर सामग्री इंटरनेट पर उपलब्ध है यानी तार्किक विश्लेषण करने की हमारी क्षमता भी घट रही है और हम चीजों पर आसानी से विश्वास भी करने लगे हैं। जब किसी सुनियोजित अभियान के तहत एक के बाद एक फेक न्यूज हमें भेजी जाती है तो एकाध बार अनदेखा करने के बाद आखिरकार हम उन्हें सच मानने ही लगते हैं और दूसरों को भी फॉरवर्ड कर इस अभियान को सफल बनाते हैं। जो समाचार वेबसाइटें हमें एकदम असली और प्रामाणिक दिखाई देती हैं वे झूठ और दुष्प्रचार के मकसद से डिजाइन की गई हो सकती हैं। वहां दर्जनों की संख्या में रोजाना डाली जाने वाली सनसनीखेज खबरें तैयार करने के लिए फर्जी खबर लेखकों की पूरी फौज तैनात होगी। हाल में खबर थी कि यू-ट्यूब पर कुछ लाख या करोड़ व्यूज पाने वाला आपका मनपसंद वीडियो पूरी तरह से फर्जी हो सकता है। यह बात सभी सोशल माध्यमों के लिए सच है। मुजफ्फरनगर के दंगों के दौरान लोगों को जिंदा जला दिए जाने के जो वीडियो वायरल हुए थे उनकी हकीकत आप जानते ही हैं कि वह बर्मा से आया था।

बजफीड की तरफ से फेसबुक के छह बड़े पक्षपातपूर्ण पेजों की एक हजार पोस्ट का सर्वे किया गया तो पता चला कि जिन पेजों पर सच्ची खबरों का अनुपात सबसे कम था उन्हें सबसे ज्यादा लाइक, शेयर और कमेंट प्राप्त हुए थे। इन पेजों पर 38 फीसदी खबरें या तो सच और झूठ का मिश्रण थीं या फिर पूरी तरह झूठ थीं। भारत में सर्वाधिक लोकप्रिय दस, पचास या सौ वेबसाइटों पर एक नजर डालिए। पाएंगे कि यहां भी फर्जी-खबरों पर आधारित साइटों ने जगह बना रखी है। ऐसी वेबसाइटों पर रोक लगाने के लिए कोई कानून नहीं है। हालांकि ऐसा कानून बनेगा, इसकी खबर जरूर गाहे-बगाहे आती रहती है, लेकिन फिर सवाल उठता है कि जब सभी दल बेचारे वोटर को बरगलाने के लिए इन माध्यमों का इस्तेमाल कर रहे हैं तो इन पर रोक कोई क्यों और कैसे लगाएगा? क्या आप मानेंगे कि जिन तमाम बड़े नेताओं के करोड़ों ट्विटर फॉलोअरों की संख्या आपको हैरानी में डाल देती है उनमें से ज्यादातर के फर्जी फॉलोअर हैं? ऐसी समीक्षाएं जिन्हें लिखने के लिए भुगतान किया जाता है, आम हैं। ऐसी ऊंची रेटिंग जो आपको कोई एप डाउनलोड करने के लिए प्रेरित करती है वह फर्जी हो सकती है। गूगल सर्च में किसी वेबसाइट का सबसे ऊपर आना तकनीकी चातुर्य का खेल हो सकता है। सोशल मीडिया साइटों और ईमेल पर भले ही आप कितने भी मजबूत पासवर्ड लगा दें, आपका अधिकांश डाटा किसी विभाग, कंपनी, दल या एजेंसी की पहुंच में हो सकता है। निजता की हम जितनी भी बात कर लें वह तमाम दिशाओं से संकट में है- चाहे वे अमेरिकी खुफिया एजेंसियां हों, साइबर अपराधी हों, राजनीतिक दल हों, एप बनाने वाले लोग हों या फिर खुद सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म चलाने वाले संस्थान। बहुत बड़ी चुनौती है सोशल मीडिया पर अपने आपको, अपने विचारों को, अपनी सूचनाओं को और अपनी निजता को सुरक्षित रखना। सोशल मीडिया पर इस या उसके हाथों नाहक प्रभावित या इस्तेमाल हो जाना बहुत आसान है। समझिए कि अगर कोई सेवा मुफ्त मिल रही है तो आप ही उसका उत्पाद हैं।

(लेखक तकनीकी मामलों के जानकार हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

उत्तरदायित्व

व्यक्ति सबल, सक्षम, सशक्त तब बनता है, जब उसमें उत्तरदायित्व की भावना आती है। उत्तरदायित्व लेने से व्यक्ति में आत्मविश्वास का संचार होता है तथा आत्मगौरव जागता है। उत्तरदायित्व व्यक्ति को मूल्यसंपन्न और स्वाभिमानी बनाता है। इसके विपरीत लापरवाह व्यक्ति घमंडी और जिद्दी होता है। उत्तरदायित्व व्यक्ति को सजग, चैतन्य और संवेदनशील बनाता है। उत्तरदायित्व कोई बोझ नहीं, अपितु एक जिम्मेदारी है जो व्यक्ति के व्यक्तित्व-विकास का एक अपरिहार्य सोपान है। इससे बुद्धि, विवेक, ज्ञान तथा अनुभव का विस्तार होता है। उत्तरदायित्व व्यक्ति को परंपरा के साथ-साथ आधुनिकता को स्वीकार करने की शक्ति प्रदान करता है। परिवार और समाज को एक साथ लेकर नेतृत्व करने की क्षमता प्रदान करता है। इसके साथ ही व्यक्ति को निर्णय करने, विवेचना करने तथा उत्तम व्यवस्था करने की अभूतपूर्व शक्ति का विकास करता है। समाज में सभी के अधिकारों को सुनिश्चित करने तथा अपने कर्तव्यों के प्रति सजग रहने की योग्यता का विकास व्यक्ति में तभी होता है जब वह स्वयं को उत्तरदायी मानता है।

उत्तरदायी होने का तात्पर्य अपने क्षेत्र का नेतृत्व करना है। उत्तम निर्णय करना है। उत्तरदायित्व को निभाना इतनी आसान बात नहीं है। इस मार्ग में एक ओर जहां फूल हैं तो दूसरी ओर कांटे भी हैं। प्रशंसा है तो निंदा भी है। आवश्यक नहीं कि एक उत्तरदायी व्यक्ति के सभी कार्यों की सभी प्रशंसा करें। अनेक बार व्यक्ति को घोर निंदा का सामना भी करना पड़ता है, क्योंकि उत्तरदायी व्यक्ति वही कदम उठाता है जो परिवार, समाज व देश के हित में हो। ऐसे में आवश्यक नहीं है कि सभी को उसका कार्य अच्छा लगे। अतः जिनको उसका कार्य अच्छा नहीं लगता अथवा जिनके व्यक्तिगत स्वार्थ में वह बाधक बनता है, उनकी घोर निंदा का सामना भी उत्तरदायी व्यक्ति को करना पड़ता है, परंतु उत्तरदायी व्यक्ति में स्वयं को उत्तरदायी समझने के कारण अद्भुत नेतृत्वशक्ति का विकास हो चुका होता है, उसकी विवेकशक्ति जाग्रत हो चुकी होती है। अतः वह निंदा से भयभीत और विचलित नहीं होता। उत्तरदायी बनना जागरण है, आत्मचेतना है। उत्तरदायित्वहीन जीवन आत्मविस्मृति है।

ममता त्रिपाठी

पाठकनामा

pathaknama@nda .jagran.com

एकतरफा विचार

संघीय मोर्चे की संभावनाएं शीर्षक से लिखे अपने लेख में कुलदीप नैयर ने गैर-भाजपा विकल्प की संभावनाओं की ओर इशारा किया है, पर उनके लेख की भाषा पूर्वाग्रही व पक्षपाती प्रतीत होती है। उन्होंने भाजपा से जिस विविधता और देश के मूल्य पर खतरा बताया है वह तथ्यहीन है। अपने तर्क के पक्ष में उन्होंने कोई उदाहरण नहीं दिया है। भारत की सोच का आधार धर्म है जिसमें सेक्युलरिज्म और लोकतंत्र निहित हैं। इन शब्दों के प्रादुर्भाव के पहले से ही ये हिंदुत्व दर्शन में परिलक्षित होते रहे हैं जिसे भाजपा या संघ अपना वैचारिक अधिष्ठान मानता है। इसीलिए लोकसभा का ध्येय वाक्य है 'धर्मचक्र प्रवर्तनाय'। अतः धर्म और रिलिजन में अंतर करने में विफल रहे लेखक ने हिंदुत्व को संविधान के खिलाफ मान लिया है, जबकि सुप्रीम कोर्ट ने इसे जीवन दर्शन माना है। लेखक ने संघीय मोर्चे में जाति आधारित पार्टियों के प्रवेश को वर्जित किया है, जबकि वास्तविकता है कि संघीय मोर्चे में शामिल होने वाले संभावित सभी क्षेत्रीय दल जातिगत राजनीति करते रहे हैं। इनके बिना संघीय मोर्चे का अस्तित्व ही नहीं हो सकता। द्विराष्ट्र का सिद्धांत देने वाले जिन्ना को हिंदू-मुस्लिम एकता का प्रचारक मानना और बहुसंख्यक हिंदुओं को शक की निगाह से संविधान विरोधी मानना लेखक की एकतरफा सोच को प्रदर्शित करता है। मेरा मानना है कि बहुसंख्यक हिंदुओं के स्वाभाविक लोकतांत्रिक आचरण के कारण ही संविधान बचा है। हिंदू हर विचार के प्रति स्वागतशील रहा है जिसके कारण देश की विविधता संरक्षित रही है। यदि मोदी सरकार हिंदूवादी एजेंडे पर भी चले तो स्वभावतः यह विविधता को संरक्षित करने वाली ही होगी।

अजीत उपाध्याय, बक्सर, बिहार

हिंसा का विरोध

बाबा साहब भीम राव आंबेडकर ने अपने जीवन में कई जन-आंदोलन चलाए। इनमें मंदिरों में दलितों के प्रवेश और सार्वजनिक तालाबों आदि से उनके पानी पीने के अधिकार के लिए किए गए प्रयास भी शामिल हैं। इस दौरान उन पर छिटपुट हमले भी हुए और वे घायल हुए, लेकिन उनकी अपील के कारण आंदोलन पूरी तरह शांत बने रहे। अपने आंदोलन पर्व को बाबा साहब ने धर्म संघर्ष का नाम दिया, जिसमें हिंसा का उनकी दृष्टि में कोई स्थान नहीं था। बाबा साहब पर खुद का एकाधिकार समझने वाली बसपा के हालिया हिंसक भारतबंद ने बाबासाहब की विरासत को घायल किया है।

ajay.mittal9|khandak@gmail.com

वोटबैंक की राजनीति

शंकर शरण ने अपने लेख, राम नाम से इतनी परेशानी क्यों, में बिलकुल सही लिखा है कि आंबेडकर को हिंदू धर्म से कोई परेशानी नहीं थी। उन्हें राम नाम से भी कोई दिक्कत नहीं थी। उन्होंने संविधान में हस्ताक्षर करते समय एक जगह अपने पिता का नाम रामजी भी लिखा था, लेकिन आज उनके नाम में पिता का नाम जोड़ने से दलित नेताओं को आपत्ति है। उन्हें लगता है कि यदि दलित वर्ग राम को मानेंगे तो उनका झुकाव भाजपा की ओर हो सकता है। केवल वोट बनाए रखने की ये राजनीति देश के लिए ठीक नहीं है।

ad.jitenderbaisoya@gmail.com

क्रिकेट में बेईमानी

आस्ट्रेलिया के खिलाड़ियों ने जिस प्रकार क्रिकेट के मैदान पर छल करने का प्रयास किया, वह कहीं से भी उचित नही है। क्रिकेट केवल एक खेल है, परंतु इसे सब कुछ मान लेना भी उचित नही होगा। आस्ट्रेलिया के खिलाड़ियों ने बेईमानी करके इस खेल को कलंकित करने का कार्य किया है। यदि इन खिलाड़ियों को उचित दंड नहीं मिला तो ये आगे भी ऐसा कर सकते हैं।

श्रीराम, नई दिल्ली

यह सिलसिला बंद हो

विभिन्न पदों पर भर्ती करने वाला केंद्रीय कर्मचारी चयन आयोग आजकल विवादों के घेरे में है। इसकी चयन प्रक्रिया पर सवाल खड़े हो गए हैं। एक तरफ जहां अयोग्य लोगों के चयन का संदेह किया जा रहा है, वहीं मेहनत के बावजूद योग्य प्रत्याशियों का हक गलत तरीके से दूसरे लोग मार ले रहे हैं। यह सिलसिला पता नहीं कब से चल रहा है। इस पूरे मामले की जांच में दोषियों को सजा मिलेगी ही, यह भी निश्चित नहीं है। आगे से क्या सब कुछ ठीक हो जाएगा और ईमानदारी से परीक्षाएं आयोजित होंगी, इसका भी कोई भरोसा नहीं है। जब किसी संस्था पर इस तरह के आरोप लगते हैं तो अपनी मेहनत के बल पर कामयाबी हासिल करने वाले युवाओं की भावना को ठेस पहुंचती है। यह सिलसिला बंद होना चाहिए।

विजय कुमार धानिया, नई दिल्ली

चुनावी सोच

मप्र में शिवराज सिंह सरकार ने अपने कर्मचारियों की सेवानिवृत्ति की उम्र 60 से बढ़ाकर 62 करने का प्रस्ताव पास किया है जो कि तर्क संगत नहीं है। तर्क दिया गया है कि व्यक्ति की औसत उम्र बढ़ी है, विकास में अनुभवियों का लाभ मिलेगा और पीएफ- ग्रेच्यूटी के 6000 करोड़ हाल-फिलहाल बचेंगे। ये पूरी तरह चुनावी सोच है, क्योंकि इसी साल विधानसभा के चुनाव होने वाले हैं। पीएफ- ग्रेच्यूटी आज नहीं तो कल तो देनी ही होगी, माना कि औसत उम्र बढ़ी है, किंतु देश में उससे कई गुना बेरोजगारी भी बढ़ी है। नए कर्मचारियों को कम वेतन पर ज्यादा समय तक रोजगार दिया जा सकता है। नए अभ्यर्थियों यानी युवा शक्ति का सदुपयोग किया जा सकता है। अतः सरकार को इस पर पुनर्विचार करना चाहिए।

mahesh_nenava@yahoo.com

ट्वीट-ट्वीट

यह बेहद शर्मनाक है कि राज्यसभा के नए नवेले सांसद शपथ लेने के बाद पहला काम पीठासीन अधिकारी के आसन के पास जमा होकर कार्यवाही बाधित करने का ही कर रहे हैं।

स्वप्न दासगुप्ता@swapan55

जिन पत्रकारों को यह लग रहा था कि फेक न्यूज कानून का ईमानदार पत्रकारों के खिलाफ गलत इस्तेमाल हो सकता है उन्हें एससी-एसटी एक्ट का गलत इस्तेमाल होने की सुप्रीम कोर्ट की बात समझ नहीं आ रही थी।

सुशांत सिन्हा@SushantBSinha

अगर अमेरिका और चीन के बीच ट्रेड वार कायम रहता है तो फिर चीन के हाथ से तमाम मौके फिसल जाएंगे। वाणिज्य मंत्री सुरेश प्रभु सुनिश्चित करें कि वे अवसर भारत की झोली में गिरें।

अरविंद विरमानी@dravirmani

आजादी के नौ हफ्तों बाद कश्मीर में पाक सेना ने नहीं, बल्कि आफरीदी कबीले के लोगों ने हमला बोला था। कश्मीर में तथाकथित मानवाधिकारों की बात करने वाले शाहिद आफरीदी भी उसी पश्तून कबीले से ताल्लुक रखते हैं।

मेजर गौरव आर्या@majorgauravarya

कांग्रेस को चुनाव से पहले ही दलित हितों की क्यों याद आती है, इतने वर्षों के शासन के दौरान उसने दलित उत्थान के लिए क्या किया? डॉ. डेविड फ्राउली@davidfrawleyved

जनपथ

राशन को लेकर हुई मुख्यसचिव से मार,
किंतु छीनते खुद रहे राशन का अधिकार।
राशन का अधिकार बताओ किसने खाया,
ट्रक के ट्रक श्रीमान गया किस ओर उड़ाया!
अब माफी साष्टांग छोड़ करिए शीर्षासन,
जो भूखे हैं लोग दीजिए उनको राशन।

– ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा जागरण प्रकाशन लि. के लिए डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित एवं 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित, संपादक (दिल्ली एनसीआर) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 23359961-62, नोएडा कार्यालय : 0120-3915800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No 50755/90 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त। वर्ष 28 अंक 260